Translation Samvaad, Volume 2, Issue 2, December 2025
ISSN: 3049-4494

From the Desk of Editor

भारत में अनुवाद-परंपरा: स्मृति, संवाद और समकालीन आवश्यकता

भारत की बौद्धिक परंपरा को यदि किसी एक शब्द में समझा जा सकता है, तो वह 'संवाद' है। यह संवाद केवल विचारों के आदान-प्रदान तक सीमित नहीं रहा, अपितु भाषाओं, सभ्यताओं और ज्ञान-परंपराओं के बीच निरंतर अनुवाद के माध्यम से विकसित होता रहा। भारत में अनुवाद कोई गौण साहित्यिक गतिविधि नहीं, अपितु ज्ञान-संरक्षण, सांस्कृतिक निरंतरता और दार्शनिक विस्तार का केंद्रीय माध्यम रहा है।

प्राचीन भारत में ही अनुवाद की एक सुदृढ़ चेतना दिखाई देती है। बौद्ध धर्म के प्रसार के साथ संस्कृत, पालि और प्राकृत ग्रंथों का चीनी, तिब्बती और मध्य एशियाई भाषाओं में रूपांतरण हुआ। इस प्रक्रिया में कुमारजीव जैसे विद्वानों की भूमिका निर्णायक रही, जिन्होंने न केवल शब्दों का अनुवाद किया, अपितु विचारों का सांस्कृतिक पुनर्संयोजन भी किया। यह अनुवाद 'शाब्दिक निष्ठा' से अधिक विचार को जीवित रखने के लिए था, न कि केवल भाषा को बदलने के लिए।

मध्यकाल में भारत की अनुवाद-परंपरा ने एक नया आयाम ग्रहण किया। संस्कृत और अन्य स्थानीय भाषाओं से फारसी और अरबी में अनुवाद हुए। इससे संस्कृत ज्ञान-परंपरा फारसी के माध्यम से इस्लामी दुनिया तक पहुँची। अल-बेरूनी का 'किताब-उल-हिंद' इसका उत्कृष्ट उदाहरण है, जहाँ भारतीय दर्शन, गणित और समाज को बाहरी दृष्टि से समझने का प्रयास किया गया। यह अनुवाद केवल भाषाई नहीं, अपितु सभ्यतागत आत्मालोचन का माध्यम भी था।

औपनिवेशिक काल में अनुवाद की प्रकृति बदली। यहाँ अनुवाद सत्ता का औज़ार भी बना—जहाँ भारतीय ग्रंथों के अंग्रेज़ी अनुवाद के माध्यम से भारत को 'व्याख्यायित' और कई बार 'सरलीकृत' किया गया। फिर भी, इसी दौर में भारतीय नवजागरण ने अनुवाद को प्रतिरोध और आत्मबोध का साधन बनाया। बंकिमचंद्र, विवेकानंद और बाद में गांधी के लेखन में अनुवाद भारतीय चेतना को वैश्विक संवाद से जोड़ने का माध्यम बना।

स्वतंत्र भारत में अनुवाद का महत्व और भी बढ़ गया है। बहुभाषी लोकतंत्र में अनुवाद केवल साहित्यिक ज़रूरत नहीं, अपितु लोकतांत्रिक आवश्यकता है। ज्ञान यदि केवल एक या दो भाषाओं तक सीमित रह जाए, तो वह सत्ता का उपकरण बन जाता है। अनुवाद ज्ञान को विकेंद्रीकृत करता है, उसे समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचाने का मार्ग खोलता है। आज विज्ञान, तकनीक, कानून और शिक्षा जैसे सभी प्रमुख क्षेत्रों में गुणवत्तापूर्ण अनुवाद राष्ट्रीय विकास की शर्त बन चुका है।

डिजिटल युग में अनुवाद का संकट और अवसर दोनों मौजूद हैं। मशीन अनुवाद गति देता है, पर अर्थ की गहराई और सांस्कृतिक सूक्ष्मता अभी भी मानवीय विवेक की माँग करती है। भारत जैसी सभ्यता में, जहाँ शब्द केवल सूचना नहीं वरन् दर्शन के वाहक हैं, वहां अनुवाद एक नैतिक कर्म भी है।

अतः भारत में अनुवाद-परंपरा को केवल अतीत की विरासत नहीं, अपितु भविष्य की बौद्धिक नीति के रूप में देखना होगा। यह वह सेतु है, जो स्मृति और आधुनिकता, स्थानीयता और वैश्विकता, तथा ज्ञान और समाज के बीच सतत संवाद को संभव बनाता है।